International Journal of Applied Research 2019; 5(6): 343-346

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2019; 5(6): 343-346
www.allresearchjournal.com
Received: 04-04-2019
Accepted: 08-05-2019

राकेश कुमार यादव
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्याल, दिल्ली, भारत

Correspondence
राकेश कुमार यादव
संस्कृत विभाग, दिल्ली विश्वविद्याल, दिल्ली, भारत

राष्ट्रदेव-प्रबोधन रूप काव्यप्रयोजन एवम् उत्तरसीताचरित महाकव्य में उसकी सम्पूर्ति

राकेश कुमार यादव

प्रस्तावना

संस्कृत-विद्या के क्षेत्र में ग्रन्थारम्भ के समय अनुबन्ध-चतुष्टय के विचार की सुदीर्घ परम्परा परिलक्षित होती है। इस अनुबन्ध-चतुष्टय(अधिकारी,विषय,सम्बन्ध तथा प्रयोजन) में प्रयोजन का मुख्य स्थान है, क्योंकि प्रयोजन ही प्रवृत्त का कारण होता है- प्रयोजनमनुद्दिश्य मन्दोऽपि न प्रवर्तते। प्राचीन काल से ही कव्यशास्त्र में प्रयोजनों पर विचार किया गया है चूँकि काव्यशास्त्र काव्य का अङ्ग है इसलिये आचार्यों ने काव्य एवं काव्यशास्त्र दोनों के प्रयोजन में समानता स्वीकार की है।

आधुनिक काव्य-रचना पर विचार करने पर यह ज्ञात होता है कि कुछ आचार्य अभी तक प्राचीन आचार्य परम्परा का अनुसरण मात्र ही कर रहे हैं। किन्तु सनातन-कवि आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी ने इस सम्बन्ध मे मौलिक एवं नवीन विचार प्रस्तुत किया है।

आचार्य द्विवेदी कवि की दृष्टि से काव्य को सप्रयोजन एवं निष्प्रयोजन दोनों मानते हैं। उनका कहना है कि कवि सदैव किसी प्रयोजनवश काव्य-रचना नहीं करता। कभी-कभी यश, अर्थ इत्यादि के बिना किसी प्रयोजन के भी कवि की काव्य-रचना में प्रवृत्ति दिखाई देती है[1]। आचार्य द्विवेदी कहते हैं कि जिस प्रकार चटका पक्षी प्रात:काल चणक-कण लाभ रूप प्रयोजन के लिये ही कलरव नहीं करता अपितु कलरव करना उसका स्वभाव है अर्थात् काव्य के प्रयोजन में कवि का कोई प्रयोजन नहीं भी रहता है, ठीक वैसे ही जैसे प्रभातवेला में चटका की चुङ्कार में ।[2] महाकवि वल्मीकि ने रामायण की रचना यशप्राप्ति, अर्थप्राप्ति अथवा शिवेतरक्षति के लिये नहीं की थी। वे तो लोकैषणा, वित्तैषणा और पुत्रैषणा इन तीनों से वीतराग थे महर्षि का कर्म तो निसर्गत: फलाशक्ति वर्जित होता है। अत: यह सिद्ध है कि रामायण की रचना में आदिकवि का कोई प्रयोजन नहीं था।[3]

कवि की दृष्टि में प्रयोजन होने का प्रश्न है तो आचार्य द्विवेदी का मत है कि काव्य में मम्मटादि प्रतिपादित प्रयोजन के अतिरिक्त अन्य अनेक प्रयोजन सम्मत है । यथा-

१. युगावश्यकता-पूर्ति
२. स्वधर्मरक्षण

---

[1] आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र पेज- 133

[2] प्रयोजनं कवे:काव्ये नापि किंचन दृश्यते।
चुङ्कृतौ कलविङ्कस्य यथा प्रभातिके क्षणे॥ काव्यालंकारकारिका-११

[3] एषणा-त्रितयोत्तिर्णे रामायण-महाकवौ।
आत्म्विष्कार-नैष्कर्म्य-नैसर्गी किं प्रयोजनम्॥ काव्यालंकारकारिका-१२

३. राष्ट्रदेव-प्रबोध इत्यादि।

युगावश्यकतापूर्ति- आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी युगावश्यकतापूर्ति रूप प्रयोजन को बताते हुए कहते हैं कि काव्य निर्माण में कवि का अन्यतम प्रयोजन उस मन्त्र की अभिव्यक्ति भी हो सकती है जिससे युग की आवश्यकता की पूर्ति सम्भव हो सके, जैसे रघुवंश में रघु की अभिव्यक्ति[4]। कवि कभी-कभी तत्कालीन समस्याओं के समाधानर्थ रहस्य की अभिव्यक्ति करने के लिए काव्य रचना करता है। उदाहरण के रूप मे महाकवि कालिदास ने रघुवंश की रचना उस समय की जब भरतवर्ष पर विदेशियों का आक्रमण हो रहा था। उनके रचना का प्रयोजन यह बताना था कि हम भारत के लोग रघु, दिलीप, अज तथा रामादि के तुल्य वीरता को फ़िर से किस प्रकार प्राप्त कर सकते हैं। कुमारसम्भवम् तथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् का प्रयोजन भी यही था।

स्वधर्मरक्षण- आचार्य द्विवेदी कहते हैं कि जब अधर्म का उत्थान हो रहा हो तब धर्म की रक्षा भी बन जाती है काव्य-प्रयोजन। जैसे यवनों के शासनकाल में यवनों पर शासन करने में समर्थ तुलसी-काव्य(गोसाई तुलसीदास जी का काव्य रामचरितमानस आदि) । [5] यवन शासन काल में जब हिन्दू धर्म का ह्रास होने लगा तो तुलसीदास जी ने अपने धर्म की रक्षा के लिये रामचरितमानस काव्य की रचना की।

राष्ट्रदेव–प्रबोधन रूप काव्यप्रयोजन

सनातन कवि आचार्य रेवाप्रसाद द्विवेदी कहते हैं कि कभी – कभी राष्ट्ररूपी देवताओं के प्रबोध के लिए कवि काव्य रचना करता है। विश्वदैवत की साक्षी में राष्ट्रदेव का प्रबोधन/जागरण भी मानव समाज के लिए काव्यप्रयोजन बनता है, जिससे चारों पुरुषार्थों (धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष) की प्राप्ति हो जाया करती है।[6]

The awakening of the Greatest God-Nation may be another purpose of poetry, if it (awakening) is observed by the diety Universe and if it offers all the four utimate goles of personal life of human beings.

आचार्य द्विवेदी कहते हैं कि राष्ट्रदेव प्रबोधन को भी काव्यप्रयोजन माना जा सकता है। भारतीय परम्परा में जैसे हरि का प्रबोध या विष्णु का जागरण सुविख्यात है वैसे काव्य मे राष्ट्रदेव का प्रबोध भी विख्यात है।और राष्ट्रदेव-प्रबोध क्या होता है ये आचार्य द्विवेदी ने बताया है। देवोत्थान एकादशी में पूजा-पाठ / जागरण करने से जो हमारे रुके हुए सब कार्य हैं वे सम्पन्न होते हैं ऐसी मान्यता भारतीय परम्परा में विख्यात है। क्योंकि देवोत्थान के बाद ही सब मंगल कार्य प्रारम्भ होते हैं। हरिप्रबोध का मतलब व्यक्ति मे सक्रियता एवं चेतना का आना कि क्या करना है और क्या नहीं करना है। राष्ट्र सोया पडा है (नेता और पब्लिक सब सो गये हैं) किसी को भी राष्ट्रीय समस्या से कुछ लेना देना नहीं है। इसलिए राष्ट्र प्रबोध/जागरण की महती आवश्यकता है और राष्ट्र का जागरण काव्य के माध्यम से ही सम्भव है । क्योंकि काव्य राष्ट्रप्रबोध करता है यानि राष्ट्र में रहने वाले लोगों को जगाता है जिससे वे लोग राष्ट्रहित के विषय में जाग्रत हो उठें। अतः राष्ट्र देव है और हम लोग भी राष्ट्रदेव हैं क्योंकि लक्षणा से आधाराधेय भाव से अभेद हो जाता है तो राष्ट्र मे रहने वाले लोग भी देव है। ऐसे राष्ट्र मे रहने वाले लोगों का जो जागरण है वहा काव्य का परम प्रयोजन है[7]। क्योंकि यदि कोई काव्य राष्ट्र के प्रति प्रेम भाव न जगा सके तो ऐसे कव्य से कोई लाभ नहीं। राष्ट्रदेव प्रबोधन रूप काव्यप्रयोजन विश्व व्यक्तियों से निरपेक्ष नहीं है।

स्वयं भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र के प्रथम अध्याय में कहा है कि विदेशी आक्रमणकारियों के कारण भारत स्वत्व बिल्कुल समाप्त हो गया था और उसे पर आधारित नाटकों नृत्यों तथा महाकाव्यों के माध्यम से पुनः प्रतिष्ठित किया गया।[8]

इस सन्दर्भ मे सनातन कवि उत्तरसीताचरितम् महाकव्य में राष्ट्रीय एवं सामाजिक विषयों को प्रतिपद समाधान-पूर्वक उकेरा है। पारम्परिक सीताचरित जो वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति आदि महाकवियों के कथानकों में चित्रित है, वह भगवती सीता के दयनीय स्वरूप को निरन्तर परीक्षा का विषय बनाते हुए एक अबला नारी के रूप में चित्रण किया गयाहै । लेकिन सनातनकवि इस परम्परा से हटकर भगवती सीता को अपनी अस्मिता के रक्षण में समर्थ तथा राष्ट्र एवं समाज के सर्वविध कल्याण के लिये सचेष्ट क्रान्तिकारी स्त्री के रूप में चित्रित किया है, न कि निरन्तर समाज की दया पात्र एक अबला नारी के रूप में । इस महाकाव्य में भगवती सीता स्वयं ही राज्य परित्याग का निर्णय लेती है और वन के लिए प्रस्थान कर जाती है । उनको किसी बहाने से वन में छोडने की जनापवाद से आक्रान्त चित्त अयोध्यापति की आवश्यकता नहीं पडती । इस महाकाव्य की कथावस्तु का प्रारम्भ होता है वनवास की अवधि को पूर्ण करके पत्नी सीता तथा अनुज लक्ष्मण के साथ लौटकर आयोध्या आए हुए राम के भव्य स्वागत से । समस्त राजपरिवार तथा प्रजाजनों की उत्कट अभिलाषा से

---

[4] युगावश्यकतापूर्ति-मन्त्र-व्यक्तिरपि क्वचित्।
प्रयोजनं रघुव्यक्ते रघुवंशे यथा कवेः ॥ वही- १३

[5] अधर्मोत्थानवेलायां धर्मरक्षापि दृश्यते।
काव्यार्थस्तुलसीकाव्ये यथा यवन-शासने॥ वही-१४

[6] राष्ट्रदेव प्रबोधोऽपि विश्वदैवत-साक्षिकः।
काव्यप्रयोजनं पुंभ्यः पुमर्थाश्चतुरो दुहन् ॥
काव्यालंकारकारिका-१५

[7] प्रतीतमो हि हरिप्रबोधो भारतीयेषु तत्र राष्ट्रमेव देवः राष्ट्रदेवाश्च वयम्।
तस्यास्य महतो देवस्य प्रबोधोऽपि काव्यस्य परमं प्रयोजनम्। काव्यालंकारकारिका वृत्ति पेज-१४

[8] इदंप्रयोजने नाट्याचार्यस्य भरतस्य नः।
वेदशास्त्रे प्रयोगाश्च तदाश्रित्य प्रवर्तिताः॥
काव्यालंकारकारिका - १६

भगवान श्रीराम को राजगद्दी पर बैठाया जाता है । रामराज्य की सुव्यवस्था की प्रशंसा करके कवि प्रजा में चर्चित सीता विषयक अपवाद को गुप्तचर द्वारा श्रीराम को कराता है – जिसे सुनकर श्रीराम बुरी तरह विषण्ण हो जाते हैं श्रीराम की इस दीनदशा को देखकर देवी सीता भी मूर्छित हो जाती है तथा मूर्छावस्था से बाहर आने पर श्रीराम मन ही मन प्रजाजन की अचिन्त्यवादिता पर खेद प्रकट करते हैं, और विधाता की इस निर्दयता पर भी दुःख व्यक्त करते हैं फिर सीता परित्याग का मन ही मन निर्णय लेते हैं । तत्पश्चात वह मूर्छित पडी हुई भगवती सीता को होश में लाते हैं उन्हें लेकर वे सभागृह में आते हैं और तुरन्त ही अपनी सभी माताओं तथा भाईयों को सभागृह में बुलाकर सीता विषयक जनापवाद से परिचित कराते हैं ।[9]

फलस्वरूप सीता के सतीत्व तथा मार्दव की अभिव्यक्ति कराने वाले माताओं के विलाप को सुनकर तथा भाईयों के अविरल अश्रुपात को देखकर श्रीराम अपने सीता परित्याग रूपी निर्णय को मुँह से कहने में असमर्थ हो जाते हैं, उस परिस्थिति में गर्भवती सीता की उनकी मनःस्थिति को समझकर स्वयं ही निर्णय लेती है और उसे प्रकट करने का उपक्रम करती है वह राज्य की शान्ति हेतु तथा उनकी कुलकीर्ति की रक्षा हेतु राजमहल को त्यागकर वनवास करने का अपना निर्णय सुनाती है ।और कहती हैं कि जो कोई विश्वरूपी देवता का वशीकरण- मन्त्र जपता और चराचर का हित करना चाहता है वृक्ष के समान वह पूजा किया करता केवल निरुपाधि परार्थता की।[10] इसलिए हे माताओं मैं यहाँ से जाती हूँ, स्वयं ही जाती हूँ, और मुझे इसकी कोई व्यथा नहीं है । अपनी कीर्ति की रक्षा के लिए अच्छे दम्पति और सत्पुरूष मृत्यु से भी नही डरते।[11] उर्मिला माण्डवी तथा शत्रुघ्न की पत्नी श्री श्रुतकीर्ति ये सभी महिलाएँ सीता को वन जाने से रोकती हैं किन्तु भगवती सीता अपनी उन सभी बहनों को वन जाने का राष्ट्रहितार्थ की औचिति बताती है ।

भारतीयों में अपनी भारतीय संस्कृति के प्रति आस्था जगाने में भी सनातन कवि पर्याप्त रूप से जागरूक हैं । माता कौश्लया के माध्यम से उसने भगवती सीता की इस दृष्टि से भी प्रशंसा की है कि उन्होंने अतिविषम परिस्थिति के परिवेश में फँसकर भी भारतीय सम्स्कृति को नहीं त्यागा । सीता के इस निर्णय से कवि ने राष्ट्रिय गरिमा के दर्शन किये हैं (उत्तरसीताचरितम् 1/17-20)

सनातन कवि ने अयोध्यापति श्रीराम तथा महर्षि वाल्मीकि की विचारधारा के माध्यम से स्पष्ट किया है कि अपने राष्ट्र की जनता के मानसिक स्तर को विकसित करने के लिए शिक्षा का व्यापक प्रचार-प्रसार होना अति आवश्यक है । क्योंकि इसके अभाव में ही सीता जैसी पवित्र नारी की भी अवधारणा हो जाती है । अतः शिक्षा के प्रचार हेतु राष्ट्रनायक को राष्ट्रीयस्तर पर निरन्तर प्रयन्तशील रहना चाहिए तथा इसी प्रकार के राष्ट्र के अन्य मनीषियों, विद्वानों, सन्त-महात्माओं आदो को भी राष्ट्रहित के लिए शिक्षा के प्रचार-प्रसार हेतु जाहरूक एवं क्रियाशील होना चाहिए ।

सनातनकवि कहते हैं कि शिक्षानीति ऐसी होनी चाहिए जो विनीत व स्वाभिमानी नागरिक तैयार करे, जिनका साहस भगीरथ हो, जिनकी गति अप्रतिहत हो, तथा जो अपने वंश व जनता को अपनी विद्या के अमृतरस से सिञ्चित करने में समर्थ हों ।[12] सन्तान को शिक्षित करने के लिए समर्पित प्रत्येक माता-पिता प्रजा के हित में निरत धर्म की दृढ के समान हैं[13] । सनातन कवि के मत में विद्यार्थी वही सफल है जो विषयरूपी तालाब के जल में कमलपत्र के समान निर्लेप होकर अपने हृदयाकाश को मलिनता से घिरने न दे-

अथ च कमलपत्रतां दधाना विषयसरोऽम्भसि नीरजस्कभावात्।
हृदयगगन आविलाभ्रभावैरनिबिडतां समुपार्जयन्तु सर्वे॥[14]

पारम्परिक बोध के महत्व को स्वीकार करने के प्रति सनातनकवि विद्यार्थियों को भी सतर्क करते हैं। जीवन के आदर्शरूप की रक्षा इन्द्रियों के सामर्थ्य के संरक्षण में ही सन्निहित है । ब्रह्मचर्य का अनुपालन आत्मानुशासन से सम्भव है जो युवा चेतना में अपूर्व आध्यात्मिक सामर्थ्य को उत्पन्न करता है जिससे वह विश्व के समस्त संघर्षों को सहन करने में समर्थ होता है ।

आचार्य वर्ग को उसके सामाजिक दायित्व के प्रति सतर्क करते हुएहुए कवि कहते है कि प्रत्येक शिक्षित व्यक्ति का सर्वोच्च दायित्व बनता है कि वह समाज के प्रत्येक व्यक्ति के हृदय को प्रकाशराशि की उज्जवला से देदीप्यमान करे । शास्त्रों का परिशीलन कर सामाजिक दायित्वों से विरत हो जाने वाला तथा विपक्षगामी जनों को रोकने का स्वल्प प्रयत्न भी न करने वाला व्यक्ति परम स्वार्थी होता है।[15]

---

[9] संस्कृतसाहित्य में राष्ट्रीय भावना

[10] विश्वदैवतमुपास्य कार्मणं यस्तु वाञ्छति चराचरप्रियम्।
तेन पादपानिभेन केवला पूज्यतेऽनुपहिता परार्थता॥
उत्तरसीताचरितम् – ३/३०

[11] यामि मातरः इतः स्वतस्ततो यामि,यामि विपिनं न मे व्यथा ।
कीर्तिकायमवितुं सुमानुषा मृत्युतोपि न हि जातु बिभ्यति ॥
वही – ३/३१

[12] प्रतिहतगतिरस्तु सा मनुष्यः पठतु भगीरथसाहसस्य विद्याम्।
अभिजन-जनते सरस्वतीनाममृतसरांसि समर्प्य तोषयेच्च॥
उत्तरसीताचरितम् -७/२३

[13] भवति हि भवति प्रजार्थतन्तुस्थितिविषये दृढमूलधर्मभित्तिः॥ उत्तरसीताचरितम्- ७/२४

[14] उत्तरसीताचरितम् – ७/४०

[15] साहित्य सामाख्या

शिक्षानीति से जुडे शासकीय सुविधा तथा अर्थलाभ के निरन्तर पात्र प्रत्येक सामाजिक व्यक्ति का अनिवार्य दायित्व है कि वह अनीति का उन्मूलन करने में अपनी सात्विक आहुति अवश्य प्रदान करे । इसी में उसकी शिक्षा की सार्थक परिणति निहित है सनातन कवि के वक्तव्य में शिक्षा जगत से जुडे प्रत्येक व्यक्ति का समाज के प्रति दायित्व मधुर हुआ है कि वे सत्य से परे अनीति का निष्पक्ष व निर्भीक होकर विरोध करें । ऐसा करने से भी समाज को सही दिशा मिल सकती है तथा राष्ट्र भी सुरक्षित रह सकता है । सदाचार तथा सद्विचार से विनीत छात्रों से युक्त कुलपति के कुल में ही राष्ट्र उच्छ्वसित होता है और संस्कृति प्राणवती-

राष्ट्रमुच्छ्वसिति स्मात्र प्राणीति स्म च संस्कृतिः ।
सदाचारो-विचारो हि तयोः प्रभव आदिमः ॥[16]

शिक्षानीति की दृढतापूर्वक प्रतिष्ठा से आदर्श नागरिक बनते हैं जो समाज तथा राष्ट्र केआदर्श नियामक होते हैं ।सामाजिक सोमनस्य तथा व्यक्ति के सात्विक उत्साह की रक्षा के लिए यह अनिवार्य है । इस प्रकार निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि सनातन कवि ने अपने राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान की भावना के साथ ही राष्ट्र की सेवा करने के लिए भी भारतीयों को दिशा-निर्देशपूर्वक प्रयास प्ररेणा प्रदान की है । भगवती सीता के आदर्शचरित के माध्यम से उनसे यह सन्देश दिया कि राष्ट्र के उध्दार के लिए किसी भी प्रकार के दुःख को सहर्ष सहने के लिये प्रतिपल उद्यत रहना चाहिए । अपने राष्ट्र तथा संस्कृति की मन, वाणी, और कर्म से रक्षा करनी चाहिए । यहाँ की महिलाओं को चाहिए कि देशरक्षा हेतु वे अपने पति के भुजदण्डों में शूरता की उष्मा का सदैव संचार करती रहें यह प्रेरणा भी मिलती है । सनातन कवि की नूतन प्रतिभा ने इस महाकाव्य के द्वारा सीता पुरातन चरितकांचन में अपनी भारतीयता किंवा राष्ट्रीय जागरण की सुगन्ध का जो संयोग किया है, वह अत्यन्त स्पृहणीय एवं श्लाघनीय है । इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यह महाकाव्य राष्ट्रदेव प्रबोधन रूप प्रयोजन की भी सम्पूर्ति करता है ।

सन्दर्भग्रन्थसूची

१ काव्यालंकारकारिका
२ उत्तरसीताचरितम्
३ आधुनिक संस्कृत काव्यशास्त्र
४ संस्कृतसाहित्य में राष्ट्रीय भावना
५ साहित्य - समाख्या

[16] उत्तरसीताचरितम् – ८/१३